शैक्षिक चिन्तक रवीन्द्र नाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन

टैगोर की जीवनी और कार्य

श्री र वन्द्र नाथ टैगोर का जन्म कलक्ता के एक सुसंस्कृत, समुद्ध एवं प्रतिष्ठित परिवार में 6 मई 1861 को हुआ था। इनके पिता श्री देवेन्द्र नाथ टैगोर बड़े विद्वान, कलाप्रेमी, धर्मप्रिय, समाजसेवक, राष्ट्रभक्त और साधु प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। रहीसी पर सादा जीवन और उच्च विचार इनके परिवार की विशेषता थी। श्री र.वन्द्र नाथ टैगोर पर इन सबका अमिट प्रभाव पड़ा।

र.वन्द्र नाथ की शिक्षा का श्री गणेश अपने घर पर हुआ। इनका पढ़ाने के लिए अलग–अलग अध्यापक नियुक्त हुए। जब र वन्द्र नाथ जी कुछ बड़े हुए तो उन्होंने घर से बाहर निकलने की अभिलाषा से विद्यालय में प्रवेश लेने की इच्छा व्यक्त की। इन्हें 'ओरिएंटल सेमेनरी स्कूल' में भर्ती करा दिया गया। वहाँ अध्यापकों का व्यवहार बड़ा कठोर और अमनोवैज्ञानिक था। 7 वर्ष की आयु में इन्हें नॉर्मल स्कूल में भर्ती किया गया। भावुक हृदय रवीन्द्र नाथ स्कूल के कृत्रिम पर्यावरण में समायोजन न कर सके। दो वर्ष बाद इन्हें एक ईसाई विद्यालय बंगाल एकादमी में प्रवेश दिलाया गया। अंत में इन्हें सेंट जंवियर स्कूल में भर्ती कराया गया। टैगोर के अनुसार यह स्कूल जेल के समान था, छात्र भय के मारे दबे–दबे रहते थे। इस विद्यालय में भी टैगोर का मन पढ़ने में नहीं लगा। पर ये घर पर सुबह शाम खूब पढ़ते थे। इन्होंने बंगाली के साथ–साथ अंग्रेजी साहित्य और संगीत, इतिहास, भूगोल, विज्ञान एवं गणित आदि विषयों का भी अध्ययन किया। इनके पिता उन्हें देश भ्रमण कराया। रवीन्द्र के जीवन पर इस यात्रा का बड़ा प्रभाव पड़ा डलहौजी के प्राकृतिक सौन्दर्य को देखकर इनका हृदय गदगद हो गया। अपने पिता श्री देवेन्द्रनाथ की प्रेरणा से इन्होंने वेद और उपनिषदों का अध्ययन किया। अध्ययन के साथ–साथ ये सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक कार्यों में भी भाग लेते रहे। 1878 में ये इंग्लैण्ड गए और 1881 तक वहाँ रहे। वहाँ इन्होंने लैटिन और अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन किया। 1881 में ये कानून की शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड गए वहाँ जाते ही इनका विचार बदल गया और ये फिर भारत लौट आए।

इंग्लैण्ड से भारत लौटने के बाद इन्होंने लेखन कार्य शुरू किया। एक ओर ये अपने देश के पिछड़ेपन से दुखी थे। 1881 से 1891 तक इनके लेख

Scanned with CamScan

मासिक पत्रिका 'भारती' में छपे। इसके बाद 1891 से 1895 तक इनके लेख 'साधना' पत्रिका में छपे। इनके लेख केवल साहित्यिक ही नहीं होते थे अपितु इनमें 'समाज सुधार' और 'राजनीतिक जागृति' की एक अदभुत शक्ति होती थी। 1891 में इनकी एक पुस्तक 'यूरोप यात्री डायरी' प्रकाशित हुई।

टैगोर अपने समय की शिक्षा पद्धति से बड़े असन्तुष्ट थे। 1892 में इन्होंने 'शिक्षार हेर फेर' की रचना की। 19वीं शताब्दी के अन्त तक रवीन्द्र ने अनेक साहित्यिक लेखों निबंधों और ग्रन्थों की रचना कर डाली। 1901 में इन्होंने अपने पिता की आज्ञा से कलकत्ता से लगभग 160 कि॰मी॰ दूर बोलपुर स्थान पर उनके 'शान्तिनिकेतन' आश्रम में 'शान्तिनिकेतन ब्रह्मचर्य आश्रम' की स्थापना की। प्रारम्भ में इस विद्यालय में केवल पाँच विद्यार्थी थे।

1902 से 1905 तक रवीन्द्रनाथ राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय रहे। 1905 में इन्होंने 'बंग विभाजन' विरोध आन्दोलन और 'स्वदेशी आन्दोलन' में खुलकर भाग लिया। 1906 स 1909 के बीच इनकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुईं जिसमें 'उत्सवेर दिन', पूर्व-पश्चिम, 'धर्म और 'शान्ति निकेतन' मुख्य हैं। 1910 में इनका विश्वविख्यात काव्य ग्रन्थ 'गीतांजलि' प्रकाशित हुआ। गीतांजलि दिव्य भावनाओं से पूर्ण गीतों का संग्रह है। 1913 में इन्हें इस ग्रन्थ पर नोबेल पुरस्कार मिला। टैगोर नोबेल पुरस्कार प्राप्त समस्त धनराशि को शान्तिनिकेतन को भेंट कर दिया। 1915 में इन्हें तत्कालीन भारत सरकार ने 'नाइटहुड' (सर) की उपाधि से सम्मानित किया। परन्तु जब राष्ट्रीय आन्दोलन में तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा जलियाँवाला नरसंहार हुआ तो इन्होंने विदेशी दासता का प्रतीक 'सर' की उपाधि को वापस कर दिया और अपनी देश भक्ति का परिचय दिया।

1915 तक इनकी ख्याति देश–विदेश में फैल गई। कई विदेशी विश्वविद्यालयों ने इन्हे डी॰ लिट् की मानक उपाधि से सम्मनित किया। इन्हें महात्मा गाँधी द्वारा दी गई 'गुरूदेव' की उपाधि सबसे बड़ी उपाधि है। गुरूदेव द्वारा पाँच छात्रों से प्रारम्भ होनेवाला 'शान्तिनिकेतन ब्रह्मचर्य आश्रम' 1921 में 'विश्वभारती विश्वविद्यालय' के रूप में विकसित हुआ। 1922 में इन्होंने श्रीनिकेतन की स्थापना की और इसमें ग्रामीण पुररूत्थान के शैक्षिक कार्यक्रम शुरू किए। 1951 इसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त हुआ। 1931 में गुरूदेव ने सत्तर वर्ष की अवस्था पूरी की। इस अवसर पर कलकत्ता में एक महोत्सव मनाया गया। पूरे देश में गुरूदेव की यश पताका

Scanned with CamScanner

फहर गई। 17 अगस्त 1941 को गुरूदेव ने अपनी ऐहिक लीला समाप्त कर महाप्रस्थान किया। यूँ गुरूदेव अब हमारे बीच नहीं हैं परन्तु इनके दो कीर्ति स्तम्भ आज भी हमारे बीच हैं। साहित्य के क्षेत्र में 'गीतांजलि' और शिक्षा के क्षेत्र में 'विश्वभारती' है।

टैगोर का दार्शनिक चिन्तन

गुरूदेव अपने बचपन में ही वेद और उपनिषद पढ़ डाले थे। उपनिषदों के तत्त्व-ज्ञान का इन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। वैसे गुरूदेव ने न किसी नए दर्शन का प्रतिपादन किया है और न ही किसी दर्शन की व्याख्या में अपनी शक्ति लगाई, परन्तु एक वक्ता, लेखक और कवि के रूप में इन्होंने जिन विचारों की अभिव्यक्ति की है उनसे इनके दार्शनिक चिन्तन की स्पष्ट तस्वीर मिलती है।

कुछ विद्वान गुरूदेव के दार्शनिक चिन्तन को पाश्चात्य दर्शन के परिप्रेक्ष्य में देखने समझने की भूल करते हैं। गुरूदेव आत्मा—परमात्मा में विश्वास करते थे। गुरूदेव प्रकृति प्रेमी थे, ये उसे सरल, शुद्ध और आनन्ददायी मानते थे। ये मनुष्य जीवन के व्यावहारिक पक्ष पर भी बल देते थे। गुरूदेव पर उपनिषदों का प्रभाव अधिक था और इन्होंने उपनिषदीय दर्शन को ही मानवीय दृष्टिकोण से देखने समझने का प्रयत्न किया है इनका चिन्तन पूर्णरूपेण भारतीय है।

टैगोर के विश्वबोध दर्शन की तत्व मीमांसा

गुरूदेव के अनुसार ईश्वर द्वारा निर्मित यह जगत उतना ही सत्य है जितना ईश्वर अपने आप में सत्य हैं। ईश्वर को इन्होंने 'निराकार' और 'साकार' दोनों रूपों में स्वीकार किया है। इसके अनुसार बीज रूप में वह निराकार है और सृष्टि रूप में साकार है।

आत्मा को गुरूदेव ने उपनिषदों के आधार पर तीन रूपों में स्वीकार किया है। प्रथम रूप में यह मनुष्यों को आत्मरक्षा में प्रवृत्त करती है। दूसरे रूप में ज्ञान विज्ञान की खोज और अनन्त ज्ञान की प्राप्ति की ओर प्रवृत्त करती है और तीसरे रूप में अपने अनन्त रूप को समझने की ओर प्रवृत्त करती है।

मनुष्य को गुरूदेव आत्मघाती प्राणी मानते थे। मनुष्य जीवन को दो पक्षों में विभाजित किया है, एक 'भौतिक' और दूसरा 'आध्यात्मिक'। मनुष्य के

Scanned with CamScan

विकास के सम्बन्ध में गुरूदेव का स्पष्ट मत था कि उसके भौतिक विकास के लिए भौतिक साधनों की आवश्यकता होती है और आध्यात्मिक विकास के लिए समाज-सेवा एवं प्रेम योग की साधना आवश्यक होते हैं।

ज्ञान मीमांसा : हमारे भारतीय दर्शन की सबसे बड़ी विशेषता मनुष्य के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों पक्षों को महत्व देना है। इस संदर्भ में ईशोपनिषद का निम्नलिखित सूक्त उद्धरणीय है :–

अन्धं तमः प्रविशन्ति ये अविद्यामु पासते।

ततो भूत इव ते तमो य उ विद्यायाँ रतः ।।

जो लोग केवल अविद्या अर्थात् संसार की ही उपासना करते हैं वे अन्ध तमस में प्रवेश करते हैं और उससे अधिक अंधकार में वे प्रवेश करते हैं जो केवन मात्र ब्रह्म विद्या में ही रत हैं।

BHARAT NAMAN PUBLISHING HOUSE

ज्ञान प्राप्ति के साधनों के संबंध में गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि भौतिक वस्तु एवं क्रियाओं का ज्ञान भौतिक माध्यमों द्वारा प्राप्त होता है और आध्यात्मिक तत्वों का ज्ञान सूक्ष्म माध्यमों द्वारा प्राप्त होता है।

टैगोर के विश्वबोध दर्शन की आचार मीमांसा

गुरूदेव मनुष्य को भौतिक एवं आध्यत्मिक शक्तियों का योग मानते थे और उसके दोनों प्रकार के विकास पर समान बल देते थे। इसके लिए ये मनुष्य को पहले अच्छा मनुष्य बनाने पर बल देते थे। ऐसा मनुष्य जो शरीर से स्वस्थ हो, मन से निर्मल और संवेदनशील हो समस्त मानव जाति के प्रति उसके हृदय में प्रेम हो और जो प्रकृति के कण–कण से प्रेम करता हो। ये प्रेम को मनुष्य के आचार विचार का आधार बनाना चाहते थे। इनका तर्क था कि प्रेम ही वह भावना है जो मनुष्य को मनुष्य के प्रति संवेदनशील बनाती है और मनुष्य को मनुष्य की सेवा की ओर प्रवृत करती है। इनका विश्वास था कि प्रेम से भौतिक जीवन भी सुखमय बनाया जा सकता है और आध्यात्मिक पूर्णता भी प्राप्त की जा सकती है।

टैगोर का शैक्षिक चिंतन

गुरूदेव बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति थे। इनकी सबसे अधिक ख्याति साहित्य के क्षेत्र में है। इन्होंने देश में समाज सुधार, राष्ट्रीय जागरण और अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए अनेक कार्य किए हैं।

Scanned with CamScan

शिक्षा के क्षेत्र में गुरूदेव के अपने अनुभव थे। 1882 में जब वे केवल 31 वर्ष के थे तो उन्होंने 'शिक्षार हेर फेर' की रचना की और इसके द्वारा लोगों का ध्यान तत्कालीन शिक्षा के दोषों की ओर आकर्षित किया। 1901 में इन्होंने अपने शैक्षिक विचारों को मूर्त रूप देने के उद्देश्य से बोलपूर के निकट स्थापित 'शान्तिनिकेतन' आश्रम में 'शान्ति निकेतन ब्रह्मचर्य आश्रम' की स्थापना की। शिक्षा से संबंधित इनकी मुख्य रचनाओं में 'शिक्षार हेरफेर' (1892) के बाद हिन्दू विश्वविद्यालय (1911), धर्म शिक्षा (1912), स्त्री शिक्षा (1915), विश्व भारती (1919), श्री निकेतन (1927), आइडियल्स ऑफ एजूकेशन (1929), शिक्षा सार कथा (1930) शिक्षा और संस्कृति (1935) और गुरूकुल कांगड़ी (1941) मुख्य हैं।

गुरूदेव ने मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने पर बल दिया। इन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि शिक्षा द्वारा जन साधारण की भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए।

शिक्षा का सम्प्रत्यय (Concept of Education)

(1) भौतिक परिभाषा "वास्तविक शिक्षा वह हैं जो उपयोगी वस्तुओं की वास्तविक प्रकृति को जानने तथा उनके उपयोग करने और वास्तविक जीवन की रक्षा करने में सहायता करती है।" (2) आध्यात्मिक परिभाषा "सर्वोच्च शिक्षा वह है जो हमारे जीवन और समस्त सृष्टि के बीच सामंजस्य स्थापित करती है।" गुरूदेव शिक्षा को मनुष्य जीवन की अनिवार्यता मानते थे। इनकी दृष्टि से शिक्षा वह सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य भौतिक प्रगति करता है और आध्यात्मिक पूर्णता की प्राप्ति करता है।

शिक्षा का उद्देश्य :- (Aims of Education)

गुरूदेव ऐसी शिक्षा के पक्षधर थे जो मनुष्य का भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास कर सके और इन्हीं को ये शिक्षा के उद्देश्य मानते थे। शिक्षा के उद्देश्य संबंधी इनके विचारों को निम्नलिखित रूप में क्रमबद्ध किया जा सकता है —

शारीरिक विकास :—रवीन्द्र नाथ टैगोर का कथन है कि पेड़ पर चढ़ने, तालाबों में तैरने, फूलों को तोड़ने तथा प्रकृति माता के साथ नाना प्रकार के अठखेलियाँ करने से बालक की शारीरिक विकास के साथ हीसाथ मस्तिष्क को आनंद एवं बचपन के स्वाभाविक आवेगों की संतुष्टि होती है। जिससे बालक के बौद्धिक विकास में भी सहायता मिलता है। इनका तर्क था कि शारीरिक विकास के लिए यदि अध्ययन कार्य छोड़ना भी पड़े तो कोई विशेष बात नहीं है।

Scanned with CamScanner

बौद्धिक विकास : गुरूदेव मनुष्य के बौद्धिक विकास पर भी बल देते थे। बौद्धिक विकास से इनका तात्पर्य कुछ विषयों के ज्ञान मात्र से नहीं था अपितु विभिन्न मानसिक शक्तियों, स्मरण, कल्पना, चिन्तन और तर्क आदि के विकास और इनके इस शक्तिशाली संगठन से था जिसके द्वारा मनुष्य विभिन्न प्रकार का ज्ञान प्राप्त करता है।

वैयष्टिक एवं सामाजिक विकास : शिक्षा द्वारा बच्चों का विकास उनकी अपनी रूचि,रूझान और क्षमताओं के अनुसार किया जाना चाहिए। इनके विचार से एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के साथ आध्यात्मिक सम्बन्ध होता है जिसके कारण ही वे एक दूसरे की कल्याण कामना से प्रेरित होकर सामाजिक संगठनों का निर्माण करते हैं।

सांस्कृतिक विकास एवं राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास : गुरूदेव राष्ट्रीय जागृति के प्रणेता था। इन्होंने शिक्षा द्वारा भारतीयों को अपनी मूलभूत संस्कृति से परिचित कराने और उन्हें तदनुकूल आचरण की ओर प्रेरित करने पर विशेष बल दिया। इनको भय था कि संकीर्ण राष्ट्रीयता मनुष्य के उत्थान में बाधक हो सकती है इसलिए इन्होंने शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध के विकास पर भी बल दिया।

नैतिक विकास : गुरूदेव मानवतावादी व्यक्ति थे। ये मानव को अच्छा मानव बनाने पर बल देते थे। अच्छे मानव का इनका अपना सम्प्रत्यय था, एक ऐसा मानव जो विश्व भर के मानवों में भेद नहीं करता।

व्यावसायिक विकास : गुरूदेव मनुष्य को आर्थिक कुशलता भी प्रदान करना चाहते थे। इसके लिए इन्होंने हस्तकार्य, शिल्प और कृषि शिक्षा पर सर्वाधिक बल दिया है।

आध्यात्मिक विकास : गुरूदेव के अनुसार उच्चतम शिक्षा वह है जो सम्पूर्ण संसार की एकता से परिचित कराए। इनके अनुसार जब मनुष्य विश्व भर के प्राणियों में एक आत्मा के दर्शन करने लगे तब समझो कि उसका आत्मतत्त्व की अनुभूति हो गई। इसी चरम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इन्होंने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृतियों के ज्ञान पर बल दिया है।

Scanned with CamScan

भारतीय मनीषा के अनुसार जो अपने समान दूसरों को देखता है जो दूसरे स्त्रियों को माता के समान, दूसरे के धन को पत्थर के समान सभी पदार्थों में अपने को देखता है वही है एकात्मवाद का अनुभव कर सकता है।

शिक्षा की पाठ्यचर्या : इस संदर्भ में सर्वप्रथम बात यह है कि गुरूदेव ने मनुष्य के प्राकृतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक तीनों प्राकर के विकास पर समान बल दिया है। इन्होंने समुचित विकास के लिए क्रिया प्रधान पाठ्यचर्या का निर्माण किया है। उनका कहना था बालक की प्रतिभा को उभारने के लिए स्वतंत्रता जरूरी है।

डॉ॰ मुखर्जी का कहना है कि–

इस दृष्टिकोण से टैगोर की शिक्षा संस्थाओं में लागू किया जानेवाला पाठ्यक्रम क्रिया प्रधान रहा है। इन्होंने प्रारंभ में अपने शान्तिनिकेतन के लिए जिस क्रिया प्रधान पाठ्यचर्या को रखा था उसका रूप निम्नलिखित था –

विषय : मातृभाषा, संस्कृत, अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल, प्रकृति विज्ञान, विज्ञान, कला, संगीत।

उपयोगी क्रियाएँ : बागवानी, वे बच्चों को प्राकृतिक दर्शन कराना चाहते थे। वे कृषि, क्षेत्रीय अध्ययन, भ्रमण, प्रयोगशाला कार्य, अजायबघर आदि का अध्ययन कराना चाहते थे।

अन्य **क्रियाएँ** : सेमिनार, वाद–विवाद, खेल कूद, नाटक, संगीत, नृत्य मौलिक रचना, ग्रामोत्थान और समाज सेवा कार्य।

शिक्षण विधियाँ : गुरूदेव मनुष्य को भौतिक एवं आध्यात्मिक तत्वों का योग मानते थे और यह मानते थे कि मनुष्य का विकास उसकी इन दोनों शक्तियों पर निर्भर करता है। वे क्रिया विधि के समर्थक थे। उन्होने बच्चों को अपने अनुभव से सीखने का मौका देने पर बल दिया। टैगोर के अनुसार —

"अपने मस्तिष्क की खिड़कियों को पुस्तकों के पृष्ठों द्वारा बंद कर लेने की हमारी आदत पड़ गई है। हमारी मानस त्वचा में पुस्तकीय उद्धरणों का प्लास्टर चिपक गया है जो सत्य के प्रत्यक्षीकरण में बाधक है।"

टैगोर शिक्षण विधियों में निम्नलिखित बातें बताई हैं–

Scanned with CamScanner

(1) बच्चों को जबरन कुछ मत सीखाओ —

कविता : माँ सारा सवेरा पढते–पढ़ते बीत गया,
तुम कहती हो कि अभी बारह ही बजे हैं।
अरे जब रात्रि को भी बारह बज सकते हैं,
तो जब बारह बजते हैं तो रात्रि क्यों नहीं हो जाती?

(2) बच्चों को जो कुछ सीखाना है जीवन के वास्तविक क्रियाओं द्वारा सीखाया जाय।

जीवंत उदाहरण से यानि पृथ्वी गोल है तो गोल रखना नहीं बल्कि तर्क के माध्यम से उसको स्थिति से अवगत कराना चाहिए।

(3) बच्चों को ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों के प्रयोग का अवसर दें।

कविता : मां मैंने एक कागज पर स्याही से लिख डाला। तुम कहती हो मैंने कागज खराब कर डाला। मां पिताजी को क्यों कुछ नहीं कहती जो अनेक कागज खराब करते रहते हैं।

(4) बच्चों को अंग्रेजी के स्थान पर मातृ भाषा में शिक्षा दो।

(5) किसी भी शिक्षण विधि का प्रयोग करो पर वह रूचिकर हो और शिक्षार्थी उसमें सक्रिय रूप से भाग लें।

(6) बच्चों को कठोर नियंत्रण से दूर रखो। उन्हें कार्य करने एवं सोचने की स्वतंत्रता दो। किसी भी स्थिति में बच्चों के साथ प्रेम और सहानुभूति पूर्वक व्यवहार करो।

बच्चों को इतना भी नहीं संवारना चाहिए जिससे उनके व्यक्तित्व का हनन हो।

कविता : मेरे बालक तुम्हारी आँखों में आंसू है तुमने अपनी अंगुलियों स्याही में डूबो ली, तथा मुंह पर स्याही लगा ली क्या इसलिए तुम्हें लोग गंदा कहत हैं। धिक्कार है उन्हें वे उस चांद को क्या कहेंगे जिसने अपना सारा मुँह स्याही में डूबो ली।

1. **मौखिक विधि** : प्राचीन काल में गुरू अपने शिष्यों को उपदेश, व्याख्यान, प्रश्नोत्तर, वाद–विवाद और तर्क आदि मौखिक विधियों द्वारा पढ़ाते थे। गुरूदेव ने कहा कि किसी भी मौखिक विधि का प्रयोग करते समय बच्चों को सोचने और अपनी शंकाओं के समाधान के स्वतंत्र अवसर दिए जाएँ उन्हे बराबर क्रियाशील रखा जाए।

Scanned with CamScan

2. **स्वाध्याय विधि** : यह सीखने सिखाने की अति प्राचीन विधि है । गुरूदेव ने स्वयं इस विधि द्वारा अधिक सीखा–समक्षा था । इस विधि के प्रयोग के संदर्भ में तीन सुझाव दिए ।

क) बच्चों को स्वाध्याय योग्य बनाया जाए, उन्हें भाषा का स्पष्ट ज्ञान कराया जाए ।

ख) बच्चों को स्वाध्याय हेतु उचित निर्देश दिए जाए ।

ग) स्वाध्याय के बाद उनसे विचार–विमर्श हो, उनकी शंकाओं का समाधान हो ।

3. **विश्लेषण एवं संश्लेषण विधि** : गुरूदेव तथ्यों को स्पष्ट करने हेतु इस विध को अधिक उपयोगी मानते थे । इस प्रयोग में दो सावधानियाँ बरतने पर बल देते थे ।

क) बच्चों के सामने जो भी उदाहरण प्रस्तुत किए जाएँ वे उनके जीवन से संबंधित हो ।

ख) सामान्यीकरण और निर्णय निर्धारण में बच्चों की सक्रिय साझेदारी हो ।

4. **क्रिया विधि** : स्व्यं करके स्वयं के अनुभव से सीखने की विधि है ।
इस विधि में भी सावधानियाँ बरतने पद बल दिया

क) क्रिया बच्चों के अपने जीवन से संबंधित होनी चाहिए ।

ख) क्रिया में बच्चों की रूचि होनी चाहिए ।

ग) क्रिया को अपने ढंग से संपादित करने की बच्चों को स्वतंत्रता होनी चाहिए ।

5. **प्रयोग विधि** : गुरूदेव ने कला–कौशल विज्ञान और अन्य व्यवहारिक विषयों एवं क्रियाओं की शिक्षा के लिए प्रयोग विधि का समर्थ किया । इस विधि के तीन पद होते हैं शिक्षक द्वारा प्रदर्शन, छात्रों द्वारा अनुकरण एवं छात्रों द्वारा अभ्यास । इस प्रकार विधि प्रदर्शन, अनुकरण एवं अभ्यास इन तीनों विधियों का योग है ।

अनुशासन

गुरूदेव आत्मानुशासन के पक्ष में थे और उसकी जाति के लिए ये उच्च सामाजिक पर्यावरण की आवश्यकता पर बल देते थे । यदि विद्यालय के शिक्षक ज्ञानी एवं चरित्रवान हैं और बच्चों के साथ प्रेम और सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करते हैं तो बच्चे स्वयं अनुशासन

BIHAR NAMAN PUBLISHING HOUSE

Scanned with CamScanner

शिक्षक : शिक्षक के विषय में गुरूदेव के विचार ये आधुनिकता एवं प्राचीनता का समन्वय था। इनकी दृष्टि से शिक्षक को ज्ञानी, संयमी और बच्चों के प्रति समर्पित होना चाहिए। ये कहा करते थे कि विद्यार्थी शिक्षकों के द्वारा दिए जाने वाले ज्ञान की अपेक्षा उनके मनोभावों और आचरण की विधियों को शीघ्र सीखते है। इनकी दृष्टि से शिक्षकों में राष्ट्र प्रेम होना चाहिए और अन्तर्राष्ट्रीय सदभाव भी होना चाहिए।

शिक्षार्थी : गुरूदेव शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का आदर करते थे और उनके लिए उनके अनुकूल शिक्षा की व्यवस्था पर बल देते थे। ब्रह्मचर्य व्रत में इन्द्रिय निग्रह, मन, वचन व कर्म की शुद्धि तथा सादा एवं प्राकृतिक जीवन का विशेष महत्व हैं। गुरूदेव के अनुसार विद्यार्थियों को व्यवहार में प्रकृति एवं सौंदर्य का उपासक होना चाहिए और सांसारिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार के ज्ञान प्राप्ति का इच्छुक होना चाहिए। जब तक वे स्वयं से प्रेरित होकर और गुरू में श्रद्धा रखकर सीखने के लिए आगे नहीं बढ़ेंगे तब तक वे कुछ नहीं सीख सकेंगे। इसके साथ–साथ उन्हें असभ्य दोषपूर्ण और निन्दनीय आचार––विचार से दूर रहना चाहिए।

विद्यालय

गुरूदेव के विचार से विद्यालय प्राचीन गुरु आश्रमों की भाँति नगर के कोलाहल से दूर प्रकृति की सुरम्य गोद में स्थित होने चाहिए। विद्यालय राष्ट्र के प्रतिनिधि होने चाहिए और इसमें राष्ट्र की सभ्यता एवं संस्कृतियों की शिक्षा की व्यवस्था भी होनी चाहिए जिसमें विद्यार्थी विश्वबोध कर सके।

विश्वभारती में आज पूर्व प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा तक की व्यवस्था है। विश्वभारती में विश्व के विभिन्न प्रकार की शिक्षा के लिए अलग–अलग भवन हैं जो निम्नलिखित

1. मृणालिनी आनन्द पाठशाला –

2. संतोष पाठशाला –

3. पाठ भवन –

Scanned with CamScanner

4. शिक्षा सत्र ।

5. उत्तर शिक्षा सदन ।

6. विद्या भवन ।

7. कला भवन ।

8. शिक्षा भवन ।

9. संगीत भवन ।

10. विनय भवन ।

11. रवीन्द्र भवन ।

12. रूरल एक्सटेन्शन सेन्टर ।

13. शिल्प भवन

14. पल्ली चर्चा केन्द्र ।

15. डिपार्टमेन्ट ऑफ सोसल वर्क ।

16. एग्रो इकनोमिक रिसर्च सेन्टर ।

17. शिक्षा चर्चा ।

शिक्षा के अन्य पक्ष

गुरूदेव ने शिक्षा के अन्य पक्षों पर भी अपने विचार व्यक्त किए है :—

जन शिक्षा : गुरूदेव ने तत्कालीन भारत की दीन—हीन दशा देखी थी। जनशिक्षा को गुरूदेव ने थोड़े व्यापक रूप में लिया है। इन्होंने जनशिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि हमारे देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। इसलिए शिक्षा में ग्राम्य जीवन की समस्याओं को विशेष स्थान दिया जाए। गुरूदेव सभी समान सामान्य, अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की बात कही थी।

स्त्री शिक्षा : गुरूदेव ने स्त्री शिक्षा के महत्व को स्पष्ट किया और उनकी शिक्षा की पूरी रूपरेखा तैयार की। गुरूदेव के अनुसार प्राथमिक शिक्षा लड़के—लड़कियों सबके लिए समान होनी चाहिए। गुरूदेव ने इस बात पर बल दिया कि लड़के—लड़कियों दोनों को किसी भी प्रकार की शिक्षा के समान अवसर और समान सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। गुरूदेव सह शिक्षा के पक्ष में नहीं थे परंतु जहाँ लड़कियों के लिए अलग से विद्यालय न हो वहाँ सहशिक्षा के लिए अनुमति देते थे। माध्यमिक स्तर पर लड़कियों के लिए गृह विज्ञान की शिक्षा देने पर बल दिया।

Scanned with CamScanner

व्यवसायिक शिक्षा : देश के आर्थिक विकास के लिए व्यवसायिक शिक्षा अति आवश्यक है और हमारा देश कृषि प्रधान देश है और कुटीर उद्योग प्रधान देश है। इसलिए यहाँ कृषि एवं कुटीर उद्योगों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था होनी चाहिए।

धर्म शिक्षा : धर्म के संबंध में गुरूदेव का दृष्टिकोण बहुत विस्तृत था। ये अन्धविश्वासियों, पूजा–पाठ की आडम्बर युक्त विधियों और कर्मकाण्ड के विरोधी थे। गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि धर्म की शिक्षा उपदेश, व्याख्यान अथवा पुस्तकों के माध्यम से नहीं दी जा सकती। इन्होंने विद्यालयों का प्रारंभ प्रातःकालीन प्रार्थना से करने, प्रकृति, कला और संगीत के सौंदर्य में ईश्वरीय तत्त्व की अनुभूति करने, दीन–हीनों की सेवा करने, गिरे हुओं को ऊँचा उठाने और समाज, राष्ट्र और विश्व हित के कार्यों को करने पर बल दिया।

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा : गुरूदेव ने राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा की कोई योजना प्रस्तुत नहीं की है परन्तु उनके विचारों से स्पष्ट होता है कि ये देशवासियों को सर्वप्रथम अपनी भाषा, साहित्य और धर्म एवं दर्शन से परिचित कराना चाहते थे। इन्होंने अपनी भाषा, साहित्य और धर्म दर्शन के साथ–साथ विश्व की अन्य भाषाओं, साहित्यों धर्मों और दर्शनों के अध्ययन पर बल दिया है।

Scanned with CamScanner